[2018] 3एस.सीआर 103

विष्णु चंद्रू गांवकर

बनाम

एनएम डेसाई

(2018 की आपराधिक अपील संख्या 359)

मार्च 06, 2018

[एक के सीकरी और अशोक भूषण, जे.जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 195 (1) (बी) (ii) - किसी भी अदालत में कार्यवाही में पेश किए गए या साक्ष्य के रूप में दिए गए दस्तावेज के संबंध में कथित अपराध के तहत अभियोजन - तथ्यों पर, अपीलकर्ता द्वारा धारा 195 (1) (बी) (ii) के तहत आवेदन में विपरीत पक्ष के प्रतिवादी-वकील के खिलाफ आरोप लगाया गया है कि उसने मृत अपीलकर्ता के अंगूठे के निशान को सत्यापित करने और जाली बनाने में अपराध किया है - जिला और सत्र न्यायाधीश का आदेश जिसमें धारा 195 (1) (बी) (ii) के तहत शिकायत दर्ज करने का निर्देश दिया गया है - उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया है - अपील पर, माना जाता है: जहां अपराध पहले ही किए जा चुके हैं और बाद में दस्तावेज अदालत में साक्ष्य में पेश या दिया गया है, तो यह न तो खंड (ए), (बी) (आई) या (बी) (ii) के तहत आता है - तथ्यों पर, उच्च न्यायालय ने सही कहा कि तत्काल मामला वह नहीं है जहां धारा 195 (1) (बी) (ii) के तहत किसी भी शिकायत पर कार्रवाई की जा सकती है।

कोर्ट ने अपील खारिज करते हुए

माना गया: 1.1 2004 की अपील संख्या 91 कई अपीलकर्ताओं द्वारा दायर की गई थी, जिनमें से एक अपीलकर्ता एसएमवी था, जिसकी 02.03.2005 को मृत्यु हो गई। अपील वापस लेने के लिए आवेदन 18.07.2006 को दायर किया गया था। उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों में से एक ने यह कहने का दायित्व लिया कि अंगूठे का निशान, जो 'एसएमवी' के रूप में लगाया गया था, उसने लगाया था, क्योंकि उसके पति 'एसएमवी' भी उसके साथ अच्छे विश्वास में हस्ताक्षर करते थे। , उसने अपना अंगूठा लगाया। प्रतिवादी यह मामला लेकर आया था कि उसे सूचित किया गया है कि गांवकरों के बीच समझौते की बातचीत चल रही है और वे अपने द्वारा दायर निष्पादन आवेदन को वापस लेने का इरादा रखते हैं। उन्होंने अपने मुवक्किल के निर्देशों के अनुसार, शेष उत्तरदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए 2004 की

अपील संख्या 91 को वापस लेने के लिए एक एसके को आवेदन का मसौदा तैयार किया और सौंप दिया। वह आगे यह मामला लेकर आए कि उन्हें एसएमवी की मृत्यु या आवेदन पर एसएमवी के कथित जाली अंगूठे के निशान के बारे में जानकारी नहीं थी। तथ्य स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि जब 2004 की अपील संख्या 91 में अपील वापस लेने के लिए आवेदन न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था, तो उक्त आवेदन पर अपीलकर्ताओं के हस्ताक्षर/अंगूठे के निशान पहले ही प्राप्त कर लिए गए थे, जिसे प्रतिवादी को सौंप दिया गया था। यह अपील न्यायालय में दाखिल करने हेतु। उसी तारीख, यानी 18.07.2006 को, न्यायालय ने अपील वापस लेने की अनुमति देते हुए आवेदन स्वीकार कर लिया। एक आपराधिक विविध. अपील वापस लेने के बाद अपीलकर्ता द्वारा सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत कार्रवाई शुरू करने के लिए आवेदन संख्या 95/2007 दायर किया गया था। आवेदन को जिला न्यायाधीश द्वारा अनुमति दी गई थी जहां जिला न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के संदर्भ में जांच करने का निर्देश दिया था [पैरा 7-9]

1.2 अपीलकर्ता द्वारा उठाया गया निवेदन इस कारण से खारिज कर दिया गया है कि सत्र न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के समक्ष, अपीलकर्ता ने धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत अपराध का आरोप लगाया है। 2007 के आवेदन संख्या 95 में सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत विचार किए गए प्रावधानों के अनुसार शिकायत करने की प्रार्थना की गई थी, यहां तक कि जिला न्यायाधीश के आदेश भी, जो इसके पक्ष में आधार था। अपीलकर्ता ने 31.07.2008 को सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के संदर्भ में जांच करने और शिकायत शुरू करने का भी निर्देश दिया है, अपीलकर्ता की शिकायत के साथ-साथ उसके द्वारा पारित आदेश में भी विशिष्ट मामला है । जिला न्यायाधीश ने अपने पक्ष में कहा, अपीलकर्ता के लिए यह खुला नहीं है कि वह पलटकर दावा करे कि आरोप धारा 195(1)(बी)(आई) के तहत आते हैं। इग्बवल सिंह मारवाह की संविधान पीठ ने धारा 195 के तहत वैधानिक योजना पर विस्तृत रूप से गौर करते हुए कहा है कि जहां अपराध पहले ही किया जा चुका है और बाद में दस्तावेज अदालत में पेश किया जाता है या साक्ष्य के रूप में दिया जाता है, वह न तो खंड (ए) के तहत आता है। , (बी)(i) या (बी) (ii). [पैरा 15]

1.3 निष्पादन आवेदन, जो डिक्री धारक द्वारा दायर किया गया था, भी वापस ले लिया गया। अपील, जो निर्णय देनदार द्वारा दायर की गई थी, निर्णय देनदार द्वारा वापस ले ली गई थी, जिसने किसी भी तरह से अपीलकर्ता के हित को नुकसान नहीं पहुंचाया था, जो डिक्री धारक का कानूनी उत्तराधिकारी था। यह भी रिकॉर्ड में है कि डिक्री धारकों के कानूनी उत्तराधिकारियों ने भी अपना निष्पादन आवेदन वापस ले लिया है, जो अंतिम रूप ले चुका है। किसी भी अपीलकर्ता ने, जिन्होंने उच्च न्यायालय के समक्ष 2004 की अपील संख्या 91 दायर

की थी, तत्काल प्रतिवादी जो उनके वकील थे, के खिलाफ कोई कार्यवाही शुरू नहीं की है। यह केवल अपीलकर्ता है, जो 2004 की अपील संख्या 91 में प्रतिवादी था, ने धारा 195 के तहत शिकायत दर्ज की है। उच्च न्यायालय ने सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद सही निष्कर्ष पर पहुंचा है कि वर्तमान में ऐसा कोई मामला नहीं है जहां कोई शिकायत हो धारा 195(1)(बी)(ii) सीआरपीसी के तहत कार्यवाही की जा सकती थी। [पैरा 16]

इग्बल सिंह मारवाह और अन्य। वी.. मीनाक्षी मारवाह और अन्य **[2005] 2 एससीआर 708: (2005) 4 एससीसी 370–अनुसरण किया गया।**

सचिदा नंद सिंह एवं अन्य बनाम. बिहार राज्य और ***अन्य*** **[1998] 1 एससीआर 492 : (1998) 2 एससीसी 493 ;** *इग्बल सिंह मारवाह और अन्य। बनाम. मीनाक्षी मारवाह और* **अन्य। [2005] 2 एससीआर 708: (2005) 4 एससीसी 370;** *सचिदा नंद सिंह और अन्य: बनाम.. बिहार राज्य और अन्य:,* **[1998] 1 एससीआर 492: (1998) 2 एससीसी 493;** *सुरजीत सिंह एवं अन्य। बनाम.बलबीर सिंह* **[1996] 3 एससीआर 70: (1996) 3 एससीसी 533 - संदर्भित।**

<u>केस कानून संदर्भ</u>

[1998] 1 एससीआर 492	**पैरा 3**	**को संदर्भित करता है**
[2005] 2 एससीआर 708	**पैरा 3**	**को संदर्भित करता है**
[1998] 1 एससीआर 492	**पैरा 11**	**को संदर्भित करता है**
[1996] 3 एससीआर 70	**पैरा 13**	**को संदर्भित करता है**
[2005] 2 एससीआर 708	**पैरा 13**	**को संदर्भित करता है**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2018 की आपराधिक अपील संख्या 359।

2009 के डब्लूपी संख्या 1380 और सीआरएल में गोवा में उच्च न्यायालय, बॉम्बे के निर्णय और आदेश दिनांक 06.08.2009 और 06.10.2009 से। 2009 का ए. क्रमांक 22.

सुश्री प्राची बाजपेयी, अपीलकर्ता की वकील।

न्यायालय का निर्णय **अशोक भूषण, जे.** द्वारा सुनाया गया

1. यह अपील आपराधिक अपील संख्या 22/2009 में गोवा में बॉम्बे उच्च न्यायालय के दिनांक 06.10.2009 के फैसले और आदेश पर सवाल उठाते हुए दायर की गई है, जिसके तहत प्रतिवादी श्री नारायण द्वारा आपराधिक अपील दायर की गई थी। एम. देसाई को सीआरपीसी

की धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत शिकायत दर्ज करने का निर्देश देने वाले जिला एवं सत्र न्यायाधीश के दिनांक 31.07.2008 के आदेश को रद्द करने की अनुमति दी गई है।

2. इस अपील पर निर्णय लेने के लिए जिन तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है वे हैं:-

1993 का एक नियमित सिविल सूट नंबर 4 दो वादी लक्ष्मण राम गाँवकर और जानू नारायण गाँवकर द्वारा दायर किया गया था, जिसमें दो प्रतिवादियों अर्थात् कुस्ता नागा गाँवकर और श्री सुरेश कुस्त गाँवकर को पक्षकार बनाया गया था। इस अपील में अपीलकर्ता मूल वादी संख्या 2, जानू नारायण गाँवकर का कानूनी उत्तराधिकारी है। 1993 के वाद क्रमांक 4 का निर्णय एवं डिक्री दिनांक 07.12.2001 द्वारा निर्णय सुनाया गया। डिक्री के निष्पादन के लिए वादी के कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा 07.12.2003 को एक आवेदन दायर किया गया था। मूल प्रतिवादियों के कानूनी उत्तराधिकारियों ने 07.12.2001 के फैसले और डिक्री पर सवाल उठाते हुए 2004 की एक सिविल अपील संख्या 91 दायर की। सिविल अपील संख्या 91 ओ£ 2004 में अपीलकर्ताओं में से एक शबा मंजू वेलिप (मूल प्रतिवादी कुस्ता नागा गांवकर के कानूनी उत्तराधिकारियों में से एक) की 02.03.2005 को मृत्यु हो गई। अपीलकर्ताओं द्वारा अपने कानूनी उत्तराधिकारियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए कोई आवेदन दायर नहीं किया गया था। वादी के वकील द्वारा 1993 के सिविल सूट नंबर 4 में डिक्री के निष्पादन के लिए दायर निष्पादन केस नंबर 1/2003 को वापस लेने का आवेदन 20.06.2006 को दायर किया गया था। 2004 की सिविल अपील संख्या 91 को वापस लेने के लिए आवेदन 18.07.2006 को दायर किया गया था, जिसे 18.07.2006 को ही अनुमति दी गई थी। 21.07.2006 को निष्पादन वाद संख्या 01/2003 को भी वापस लेने की अनुमति दी गई। 29.11.2007 को, अपीलकर्ता ने सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें प्रतिवादी, जो 2004 की सिविल अपील संख्या 91 में अपीलकर्ताओं के लिए वकील था, के खिलाफ आरोप लगाया गया कि उसने अपराध किया है। मृत अपीलकर्ता शबा मंजू वेलिप के अंगूठे का सत्यापन और नकली निशान। आदेश दिनांक 31.07.2008 द्वारा, विद्वान जिला एवं सत्र न्यायाधीश ने पाया कि यह धारा 195(1)(बी)(i1) के तहत जांच के लिए एक उपयुक्त मामला है और धारा 195(1)(बी) के तहत जांच करने और शिकायत दर्ज करने का निर्देश दिया। (i1). प्रतिवादी ने जिला एवं सत्र न्यायाधीश के दिनांक 31.07.2008 के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की। उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित फैसले में अपील की अनुमति दी और जिला न्यायाधीश के दिनांक 31.07.2008 के

आदेश के साथ-साथ उसके अनुसार दायर की गई शिकायत को भी रद्द कर दिया। उच्च न्यायालय के फैसले से व्यथित होकर अपीलकर्ता ने यह अपील दायर की है।

3. अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय सचिदा नंद सिंह और अन्य मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर भरोसा कर रहा है। बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (1998) 2 एससीसी 493, जिसे इकबाल सिंह मारवाह एवं अन्य मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा अनुमोदित किया गया है। बनाम मीनाक्षी मारवाह एवं अन्य, (2005) 4 एससीसी 370, ने प्रतिवादी द्वारा दायर अपील को स्वीकार कर लिया है, जबकि इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय, जिसमें धारा 195(1)(बी)(आई1) सीआरपीसी का संदर्भ दिया गया था, जो वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं थे, क्योंकि अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत में लगाए गए आरोप धारा 195(1)(बी)(1) के संदर्भ में थे। यह प्रस्तुत किया गया है कि जिला एवं सत्र न्यायाधीश ने सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर सही ढंग से विचार किया है और धारा 195(1)(बी) के तहत उत्तरदाताओं के खिलाफ शिकायत दर्ज करने का निर्देश दिया है। सेवा के बावजूद प्रतिवादी की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ है।

4. हमने पक्षों के विद्वान वकील की दलीलों पर विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।

5. सीआरपीसी की धारा 195(1) निकालना उपयोगी है, जिसका प्रभाव निम्नलिखित है:-

"195. लोक सेवकों के वैध अधिकार की अवमानना, सार्वजनिक न्याय के विरुद्ध अपराध और साक्ष्य में दिए गए दस्तावेजों से संबंधित अपराधों के लिए अभियोजन। - (1) कोई भी न्यायालय संज्ञान नहीं लेगा-

(ए) (i) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 172 से 188 (दोनों सम्मिलित) के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का, या

(ii) ऐसे अपराध के लिए किसी उकसावे या प्रयास का, या (iii) ऐसे अपराध को करने के लिए किसी आपराधिक साजिश का,

संबंधित लोक सेवक या किसी अन्य लोक सेवक, जिसके वह प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ है, की लिखित शिकायत को छोड़कर;

(बी) (i) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की निम्नलिखित धाराओं में से किसी के तहत दंडनीय कोई भी अपराध, अर्थात् धारा 193 से 196 (दोनों सम्मिलित), 199,

200, 205 से 211 (दोनों सम्मिलित) और 228, जब ऐसा अपराध किसी न्यायालय में या किसी कार्यवाही के संबंध में किए जाने का आरोप लगाया जाता है, या

(ii) उक्त संहिता की धारा 463 में वर्णित या धारा 471, धारा 475 या धारा 476 के तहत दंडनीय कोई भी अपराध, जब ऐसा अपराध किसी कार्यवाही में प्रस्तुत या साक्ष्य के रूप में दिए गए दस्तावेज़ के संबंध में किया गया हो। किसी भी न्यायालय में, या

(iii) उप-खंड (i) या उप-खंड (ii) में निर्दिष्ट किसी भी अपराध को करने, या करने का प्रयास करने, या उकसाने के लिए किसी भी आपराधिक साजिश का,

[उस न्यायालय की, या न्यायालय के ऐसे अधिकारी की, जिसे वह न्यायालय इस संबंध में लिखित रूप में प्राधिकृत कर सकता है, या किसी अन्य न्यायालय की, जिसके वह न्यायालय अधीनस्थ है, लिखित शिकायत को छोड़कर]।

. . . . . ”

6. रिकॉर्ड पर मौजूद तथ्यों से, इसमें कोई विवाद नहीं है कि 2004 की अपील संख्या 91 कई अपीलकर्ताओं द्वारा दायर की गई थी, जिनमें से एक अपीलकर्ता शबा मंजू वेलिप थीं, जिनकी 02.03.2005 को मृत्यु हो गई थी। अपील वापस लेने के लिए आवेदन 18.07.2006 को दायर किया गया था। यह भी ध्यान देने योग्य है कि एक विमल शबा वेलिप, जो उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों में से एक थी, ने यह कहने का बीड़ा उठाया कि एफ अंगूठे का निशान, जो शबा मंजू वेलिप के रूप में लगाया गया था, उसके द्वारा लगाया गया था, क्योंकि वह शबा के पति मंजू वेलिप भी उनके साथ हस्ताक्षर करते थे, नेकनीयती के चलते उन्होंने अपना अंगूठा लगाया। प्रतिवादी एनएम देसाई यह मामला लेकर आए थे कि उन्हें सूचित किया गया है कि गांवकरों के बीच समझौते की बातचीत चल रही है और वे उनके द्वारा दायर निष्पादन आवेदन को वापस लेने का इरादा रखते हैं। उन्होंने, अपने मुवक्किल के निर्देशों के अनुसार, शेष उत्तरदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए 2004 की अपील संख्या 91 को वापस लेने के लिए एक आवेदन तैयार किया और सुरेश के. गांवकर को सौंप दिया। वह आगे यह मामला लेकर आए कि उन्हें शबा मंजू वेलिप की मृत्यु या आवेदन पर शबा मंजू वेलिप के कथित जाली अंगूठे के निशान के बारे में जानकारी नहीं थी।

7. तथ्य स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि जब 2004 की अपील संख्या 91 में अपील वापस लेने के लिए आवेदन न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था, तो उक्त आवेदन पर अपीलकर्ताओं के हस्ताक्षर/अंगूठे के निशान पहले ही प्राप्त कर लिए गए थे, जिसे अदालत को सौंप दिया गया था। इस अपील में प्रतिवादी न्यायालय में दाखिल करने के लिए। उसी तारीख,

1.18.07.2006 को, न्यायालय ने अपील वापस लेने की अनुमति देते हुए आवेदन स्वीकार कर लिया।

8. एक आपराधिक विविध. अपील वापस लेने के बाद अपीलकर्ता द्वारा सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(i1) के तहत कार्रवाई शुरू करने के लिए आवेदन संख्या 95/2007 दायर किया गया था। 2007 के आवेदन संख्या 95 की प्रति अनुलग्नक पी-4 के रूप में दाखिल की गई है। आवेदन में प्रार्थना को उद्धृत करना उपयोगी है, जिसका निम्नलिखित प्रभाव है: -

> "इसलिए आवेदक प्रार्थना करता है कि उपरोक्त के मद्देनजर एक जांच की जाए और मुकदमा चलाने और आगे की कार्रवाई करने के लिए आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 195 (1) (बी) (i1) के तहत विचार किए गए प्रावधान के अनुसार लिखित शिकायत की जाए। कानून के प्रावधान के अनुसार उपरोक्त उत्तरदाताओं के खिलाफ।

9. आवेदन को जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 31.07.2008 के आदेश के तहत अनुमति दी गई थी, जहां जिला न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(i1) के संदर्भ में जांच करने का निर्देश दिया था, यह उपयोगी है जिला न्यायाधीश के आदेश के पैरा 18 एवं 19 को उद्धृत करें, जिसका प्रभाव निम्नलिखित है:-

> "18. हालाँकि प्रतिवादी नंबर 9 ने प्रचार किया है कि वह इस तरह के किसी भी लेन-देन से पूरी तरह से असंबद्ध है, लेकिन जब वह उक्त अपीलकर्ताओं का प्रतिनिधित्व कर रहा था और जिनमें से एक शबा थी, उसकी मृत्यु हो चुकी थी और उसने वापसी की मांग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, तो ऐसी दलील उसके मुंह से नहीं निकल सकती थी। शबा की उस दिन मृत्यु हो जाने के बावजूद भी उनके कहने पर 18.7.2006 को अपील दायर की गई। इसलिए, रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के आधार पर , यह स्पष्ट है कि आईपीसी की धारा 463 के तहत जालसाजी का अपराध कथित तौर पर अपील को वापस लेने के लिए किया गया है जिसमें मृतक को जीवित के रूप में गलत तरीके से दर्शाया गया है और उसी के संबंध में बिक्री कार्यों का निष्पादन किया गया है। अगले दिन और उसके एक दिन बाद भी वही संपत्ति। न्यायालय में दायर किया गया आवेदन साक्ष्य अधिनियम और साक्ष्य के संदर्भ में "एक दस्तावेज" होगा।
>
> 19. इसलिए मैं संतुष्ट हूं कि यह एक उपयुक्त मामला है जहां सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के संदर्भ में जांच की जानी आवश्यक है और कानून के अनुसार उचित कार्रवाई के लिए उत्तरदाताओं के खिलाफ शिकायत शुरू की जानी चाहिए। "

10. इस न्यायालय के दो निर्णय, जिन पर उच्च न्यायालय पहले ही गौर कर चुका है, को विस्तृत संदर्भ की आवश्यकता है।

11. सचिदा नंद सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, (1998) 2 एससीसी 493 में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ को धारा 195(1)(बी)(ii) और धारा 340(1) सी.आर.पी.सी. पर विचार करने का अवसर मिला था। धारा 195(1)(बी)(ii) की व्याख्या करते हुए, पैरा 8, 11 और 23 में निम्नलिखित निर्धारित किया गया था: -

> "**8.** इसके अलावा धारा 195(1)(बी)(ii) की व्याख्या करना मुश्किल है क्योंकि इसमें अभियोजन कार्यवाही शुरू करने पर केवल इसलिए रोक है क्योंकि संबंधित दस्तावेज अदालत में पेश किया गया था, भले ही जालसाजी का कार्य अदालत में पेश करने से पहले किया गया हो। अदालत। ऐसे किसी भी निर्माण से अप्रिय परिणाम होने की संभावना है। उदाहरण के लिए, यदि किसी मूल्यवान दस्तावेज़ की रैंक जालसाजी का पता चला है और जालसाज को यकीन है कि वह आसन्न रूप से अभियोजन की कार्यवाही में उलझ जाएगा, तो वह आसानी से उस दस्तावेज़ को किसी भी लंबे समय से चली आ रही मुकदमेबाजी में प्रस्तुत कर सकता है, जिसे या तो उसने स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा शुरू किया था। उससे प्रभावित हों और इस तरह उस मुकदमे के लंबित रहने की पूरी लंबी अवधि के लिए अभियोजन चलाने से बचें। यह एक स्थापित प्रस्ताव है कि यदि किसी कानून की भाषा एक से अधिक व्याख्या करने में सक्षम है, तो जो शरारतपूर्ण परिणाम देने में सक्षम है उसे टाला जाना चाहिए। गिल बनाम डोनाल्ड हंबरस्टोन एंड कंपनी लिमिटेड 5 का उद्धरण देते हुए मैक्सवेल ने अपने ग्रंथ (इंटरप्रिटेशन ऑफ स्टैट्यूट्स, 12वां संस्करण, पृष्ठ 105) में कहा है कि "यदि भाषा एक से अधिक व्याख्या करने में सक्षम है तो हमें अधिक व्याख्या को त्याग देना चाहिए।" प्राकृतिक अर्थ यदि यह अनुचित परिणाम की ओर ले जाता है और उस व्याख्या को अपनाएं जो उचित व्यावहारिक परिणाम की ओर ले जाती है। अब हम जिस खंड पर विचार कर रहे हैं, उसमें यह दिखाने के लिए पर्याप्त संकेत हैं कि अधिक प्राकृतिक अर्थ वह है जो सख्त निर्माण के पक्ष में झुकता है, और इसलिए उपरोक्त अवलोकन यहां प्रमुखता से लागू होता है।
>
> **11.** संहिता की धारा 340(1) में परिकल्पित प्रारंभिक जांच का दायरा यह सुनिश्चित करना है कि क्या न्याय प्रशासन को प्रभावित करने वाला कोई अपराध अदालत में पेश किए गए दस्तावेज़ के संबंध में किया गया है या उस अदालत में कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में दिया गया है। दूसरे शब्दों में, अपराध उस समय के दौरान किया जाना चाहिए था जब दस्तावेज़ हिरासत में था।

23. उपरोक्त चर्चा का अनुक्रम यह है कि संहिता की धारा 195(1)(बी)(ii) में निहित प्रतिबंध उस मामले पर लागू नहीं होता है जहां दस्तावेज़ की जालसाजी अदालत में दस्तावेज़ पेश करने से पहले की गई थी। तदनुसार हम इस अपील को खारिज करते हैं।"

12. यह नोट करना भी प्रासंगिक है कि इस न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई है कि किसी दस्तावेज़ की जालसाजी यदि न्यायालय के परिसर के बाहर और न्यायालय में पेश होने से बहुत पहले की जाती है, तो उसे न्याय प्रशासन को प्रभावित करने वाला नहीं माना जा सकता है। पैरा 12 में निम्नलिखित कहा गया है:-

"**12.** यह एक तनावपूर्ण सोच होगी कि किसी दस्तावेज़ की जालसाजी से जुड़ा कोई भी अपराध यदि अदालत के परिसर के बाहर और अदालत में पेश होने से बहुत पहले किया जाता है, तो उसे न्याय प्रशासन को प्रभावित करने वाला भी माना जा सकता है क्योंकि वह दस्तावेज़ बाद में अदालत में पहुंच गया। रिकॉर्ड।"

13. **सुरजीत सिंह और अन्य बनाम बलबीर सिंह, (1996) 3 एससीसी 533** में एक अन्य तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा व्यक्त किया गया एक विपरीत विचार, **सचिदा नंद सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (सुप्रा),** में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार के अनुरूप नहीं है इसे संघर्ष को हल करने के लिए एक संविधान पीठ को भेजा गया था। संविधान पीठ ने **इकबाल सिंह मारवाह और अन्य बनाम मीनाक्षी मारवाह और अन्य, (2005) 4 एससीसी 370** में अपने फैसले के जरिए संघर्ष का समाधान किया और **सचिदा नंद सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (सुप्रा)** में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले को मंजूरी दे दी। पैरा 33 में, निम्नलिखित निर्धारित किया गया था:-

"**33.** ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, हमारी राय है कि सचिदा नंद सिंह का निर्णय सही है और उसमें लिया गया दृष्टिकोण सही दृष्टिकोण है। सीआरपीसी की धारा 195 (1) (बी) (2) केवल तभी लागू होगी जब उक्त प्रावधान में उल्लिखित अपराध किसी दस्तावेज के संबंध में किए गए हों, जब इसे किसी अदालत में कार्यवाही में पेश किया गया हो या साक्ष्य के रूप में दिया गया हो।

14. हमारे सामने अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने केवल एक ही दलील दी है, यानी, **इकबाल सिंह मारवाह (सुप्रा)** में संविधान पीठ का फैसला एक मामला था, जिसने धारा 195(1)(बी)(आईटी) की व्याख्या की थी, जिसमें कोई विवाद नहीं हो सकता लेकिन वर्तमान में धारा 195(1)(बी)(1) के तहत अपराध का मामला था। इसलिए इस न्यायालय की संविधान

पीठ का फैसला लागू नहीं था और उच्च न्यायालय ने **इग्बल सिंह मारवाह (सुप्रा)** मामले में संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करके गलती की।

15. हमारे समक्ष अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत की गई दलील को इस कारण से खारिज कर दिया जाना चाहिए कि सत्र न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता ने धारा 195 के तहत अपराध का आरोप लगाया है। 1)(बी)(ii). 2007 के आवेदन संख्या 95 की एक प्रति अनुबंध पी-4 के रूप में संलग्न की गई है। ऊपर दी गई प्रार्थना में स्पष्ट रूप से सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(आई1) के तहत विचार किए गए प्रावधानों के अनुसार शिकायत करने की प्रार्थना की गई है, यहां तक कि जिला न्यायाधीश का आदेश भी, जो कि के पक्ष में आधार था। अपीलकर्ता ने 31.07.2008 को सीआरपीसी की धारा 195(1)(बी)(ii) के संदर्भ में जांच करने और शिकायत शुरू करने का भी निर्देश दिया है, जिसे तत्काल संदर्भ के लिए ऊपर भी निकाला गया है। अपनी शिकायत में अपीलकर्ता का विशिष्ट मामला होने के साथ-साथ जिला न्यायाधीश द्वारा उसके पक्ष में पारित आदेश होने के कारण, अपीलकर्ता के लिए अब यह दावा करना संभव नहीं है कि आरोप धारा 195(1)(बी) के तहत आते हैं। (ii). एक और कारण है जिसके कारण उपरोक्त निवेदन स्वीकार नहीं किया जा सकता। संविधान पीठ ने धारा 195 के तहत वैधानिक योजना पर विस्तृत रूप से गौर करते हुए कहा है कि जहां अपराध पहले ही किया जा चुका है और बाद में दस्तावेज अदालत में पेश किया जाता है या साक्ष्य के रूप में दिया जाता है, वह न तो खंड (ए), (बी) के तहत आता है। (1) या (बी) (ii). पैरा 10 में, संविधान पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं: -

> “10. वैधानिक प्रावधान की योजना की अब जांच की जा सकती है। मोटे तौर पर, धारा 195 सीआरपीसी अपराधों की तीन अलग-अलग श्रेणियों से संबंधित है जिन्हें खंड (ए), (बी) (1) और (बी) (आई 1) में वर्णित किया गया है और वे (1) लोक सेवकों के कानूनी प्राधिकार की अवमानना से संबंधित हैं। (2) सार्वजनिक न्याय के विरुद्ध अपराध, और (3) साक्ष्य में दिए गए दस्तावेज़ों से संबंधित अपराध। खंड (ए) आईपीसी की धारा 172 से 188 के तहत दंडनीय अपराधों से संबंधित है जो आईपीसी के अध्याय 10 में घटित होते हैं और अध्याय का शीर्षक है - "लोक सेवकों के वैध प्राधिकारी की अवमानना"। ये ऐसे अपराध हैं जो किसी लोक सेवक के कामकाज या वैध कर्तव्यों के निर्वहन को सीधे प्रभावित करते हैं। खंड (बी)(i) अध्याय XI आईपीसी में अपराधों को संदर्भित करता है जिसका शीर्षक है - "झूठे साक्ष्य और सार्वजनिक न्याय के खिलाफ अपराध"। इस खंड में उल्लिखित अपराध स्पष्ट रूप से झूठे साक्ष्य देने या गढ़ने या किसी न्यायिक कार्यवाही में या न्याय की अदालत के समक्ष या किसी लोक सेवक के समक्ष झूठी घोषणा करने से संबंधित हैं, जो ऐसी घोषणा प्राप्त करने के लिए कानून द्वारा बाध्य

या अधिकृत है, और कुछ के लिए भी। अन्य अपराध जिनका न्याय की अदालत में कार्यवाही से सीधा संबंध है (धारा 205 और 211 टीपीसी)। यह धारा 195 के दो प्रावधानों या खंडों की योजना है। अपराध ऐसा होना चाहिए जिसका किसी लोक सेवक के कामकाज या वैध कर्तव्यों के निर्वहन पर सीधा असर हो या न्याय की अदालत में कार्यवाही के साथ सीधा संबंध हो, अभिव्यक्ति "जब ऐसा अपराध कथित तौर पर किया गया हो" किसी भी अदालत में कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत या दिए गए दस्तावेज़ के संबंध में खंड (बी) (ii) में होने वाले दस्तावेज़ का सामान्य रूप से मतलब यह होना चाहिए कि दस्तावेज़ वास्तव में अदालत में पेश किया गया है या साक्ष्य के रूप में दिया गया है। ऐसी स्थिति या आकस्मिकता जहां इस खंड में उल्लिखित कोई अपराध पहले ही किया जा चुका है और बाद में दस्तावेज अदालत में पेश किया जाता है या साक्ष्य के रूप में दिया जाता है, खंड (ए) (आई) और (बी) के अनुरूप नहीं प्रतीत होता है)(i) और परिणामस्वरूप धारा 195 सीआरपीसी की योजना के साथ। यह इंगित करता है कि खंड (बी)(ii) एक ऐसी स्थिति पर विचार करता है जहां उसमें गिनाए गए अपराध किसी दस्तावेज़ के संबंध में उसके उत्पादन के बाद या किसी अदालत में कार्यवाही में साक्ष्य देने के संबंध में किए जाते हैं।

16. यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि निष्पादन आवेदन, जो डिक्री धारक द्वारा दायर किया गया था, भी वापस ले लिया गया था। यह नोटिस करना और भी प्रासंगिक है कि अपील, जो निर्णय देनदार द्वारा दायर की गई थी, निर्णय देनदार द्वारा वापस ले ली गई थी, जिसने किसी भी तरह से अपीलकर्ता के हित को नुकसान नहीं पहुंचाया था, जो डिक्री धारक का कानूनी उत्तराधिकारी था। यह भी रिकॉर्ड में है कि डिक्री धारकों के कानूनी उत्तराधिकारियों ने भी अपना निष्पादन आवेदन वापस ले लिया है, जो अंतिम रूप ले चुका है। किसी भी अपीलकर्ता ने, जिन्होंने उच्च न्यायालय के समक्ष 2004 की अपील संख्या 91 दायर की थी, वर्तमान प्रतिवादी एनएम डेसाली, जो उनके वकील थे, के खिलाफ कोई कार्यवाही शुरू नहीं की है। यह केवल अपीलकर्ता है, जो 2004 की अपील संख्या 91 में प्रतिवादी था, ने धारा 195 के तहत शिकायत दर्ज की है। उच्च न्यायालय ने सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद सही निष्कर्ष पर पहुंचा है कि वर्तमान में ऐसा कोई मामला नहीं है जहां कोई शिकायत हो धारा 195(1)(बी)(ii) Cr.PC के तहत कार्यवाही की जा सकती थी

17. इस प्रकार हम उच्च न्यायालय के इस दृष्टिकोण का पूरी तरह से समर्थन करते हैं कि वर्तमान में ऐसा मामला नहीं है जहां किसी भी शिकायत पर धारा 195(1)(बी)(ii) के तहत कार्रवाई की जा सकती थी। इस प्रकार हमें इस अपील में कोई योग्यता नहीं मिलती और इसे खारिज किया जाता है।

निधि जैन अपील खारिज.

आशीष तिवारी की देखरेख में आशा शुक्ला द्वारा अनुवादित।